International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232, Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 2; Issue 4; July 2016; Page No. 16-19

हिन्दी काव्य में दलित सन्दर्भ

संगम वर्मा
सहायक प्राध्यापक, स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग एवं शोध केन्द्र सतीश चन्द्र धवन राजकीय महाविद्यालय, ज़िला–लुधियाना, राज्य–पंजाब, भारत।

प्रस्तावना

हिन्दी में दलित कविता को जानने के लिए सबसे पहले यह जानना जरूरी है कि 'दलित' शब्द का क्या अभिप्राय है? दलित कौन है और दलित कविता क्या है? यह बात स्पष्ट होने पर ही हम दलित कविता को जान पाएंगे । 'दलित' वह है जिसका दलन किया गया हो, दबाया गया हो, कुचला गया हो समाज में जो हज़ारों वर्षों से दबाया गया हो मानवीय अधिकारों से जो सदा दूर रखा गया हो जिसे अपने निजी स्वार्थों के लिए मानव निर्मित झूठी मान्यताओं को मनुस्मृति के नाम पर स्वीकारे के लिए बाध्य किया गया हो वह दलित है। उपेक्षित, अपमानित, प्रताड़ित, बाधित और पीड़ित व्यक्ति भी दलित की श्रेणी में आते हैं इस तरह दलित शब्द की परिभाषा के अन्तर्गत जहाँ सदियों से सामाजिक वर्ण व्यवस्था और जातिवाद से अभिषप्त दलित, शोषण, उत्पीड़न व्यक्ति हैं, वही सदियों से उत्पीड़न, उपेक्षित, अपमानित, शोषित, सामाजिक बन्धनों में बधित नारी एवं बच्चे भी इसी श्रेणी में आते हैं। भूमिहीन, अछूत, बंधुआ, दास, गुलाम, दीन और पराश्रित–निराश्रित भी दलित हैं।[1]

हिन्दी काव्य में सबसे पहले दलित–सन्दर्भ की कविता में आर्यों की वर्ण व्यवस्था के विरूद्ध कोई कविता रची गयी हो इसका उल्लेख अभी तक स्पष्ट नही हुआ है, पर उस काल में दो महाकाव्य और आर्यों की धार्मिक पुस्तक–रामायण और महाभारत ऐसे दस्तावेज़ हैं। जिनमें इस मनुवादी व्यवस्था को तोड़ कर प्रतिरोध किया गया है। रामायण जैसे धार्मिक महाकाव्य में हम पहला उदाहरण 'षम्बूक' का पाते हैं, जो शूद्र होकर ब्राह्मणों के तपस्या करने के एकाधिकार को तोड़ता हुआ वृक्ष पर उलटा लटककर तपस्या कर रहा था, इसलिए उसने इस मनुवादी वर्ण–व्यवस्था को तोड़ने का प्रयास किया इस अपराध में राजा राम ने स्वयं आकर उसका वध कर दिया।[2]

इसी तरह का दूसरा उदाहरण महाभारत काल में भी बालक 'एकलव्य' शूद्र होते हुए भी क्षत्रियों के एकाधिकार धनुर्विद्या को सीख कर पारगंत हो जाता है वर्ण व्यवस्था के विधान का उल्लंघन करने के अपराध में गुरू द्रोणाचार्य बलपूर्वक उसका दायें हाथ का अंगूठा कटवा देते है ताकि भविष्य में पुनः धनुर्विद्या चलाने का साहस न कर सकें उपरोक्त उदाहरणों से यह स्पष्ट होता है कि 'दलित' अपने अधिकारों के लिए वैदिक काल एवं उत्तर वैदिक काल से संघर्ष करता आया है, जोकि पूर्ण रूपेण विष्वसनीय है।

वस्ततुः हम जब हिन्दी कविता में दलित सन्दर्भ के परिप्रेक्ष्य पर बात करते हैं तो उत्तर वैदिक काल में बौद्ध और जैन धर्म के आने पर आर्यों की कट्टरपन्थी वर्ण व्यवस्था की धज्जियाँ उखाड़ी जाने लगी इसके लिए आर्यों के धार्मिक ग्रन्थों की मान्यताओं को असत्य साबित करने के लिए बौद्ध एवं जैन साहित्य लिखा गया । इस साहित्य ने ब्राह्मण वर्ग को कठघरे में खड़ा कर दिया। बौद्ध धर्म की महायान शाखा ने तो इस प्रकार की जाति व्यवस्था पर कठोरतापूर्वक प्रहार किया है–'चर्यापदों में दलित और छोटी जातियों को अभिव्यक्ति का पहली बार अवसर मिला। इनमें 84 सिद्ध कवियों में से 30 शूद्र कवि थे, जिन्होंने अपनी ओजस्वी वाणी से जाति व्यवस्था और ब्राह्मणवादी संस्कृति का खुलकर विरोध किया। वर्णव्यवस्था जातिवाद, अमानवीय भेदभाव और ब्राह्मणों के सर्वोच्च एकाधिकार को अपनी कविताओं से चुनौती देने वाले ये सिद्ध दलित कवि हैं– सरहपाद, कंकरिपा, मीनपा, चमरिपा, खड़गपा, धनगपा, शातिपा, छत्रपा, घोमिपा, तंतपा, कुचिपा, महीपा, जोगीपा, घहुंरिपा, कमलपा, सर्वभक्षणपा, अनगंपा, कजंरिपा, राहुलपा, धाकेरिपा, गडुंरिपा, निर्गुणपा, चर्मटीपा, सिखनपा, मणिभद्रायोगिनी, कलकल्प्पा, पुलिलपा, उपनहंपा, कथंालीपा, आदि।[3] हिन्दी के प्रथम कवि सरहपाद (सरहपा) के बारे में राहुल जी के विचार निम्नवत् हैं।

राहुल जी अनुसार सिद्धों का प्रादुर्भाव हिन्दी कविता में आठवीं शताब्दी में हो गया था, जब महायान धर्म और दर्षन चरमोत्कर्ष हो चुका था और मंत्रयान, वज्रयान को एक नयी दिषा मिल रही थी। इसके प्रणेता स्वयं सरहपाद (सरहपा) थे। इसी विषय में राहलु जी ने कहा है–

> ''उनकी जीवनी के बारे में बहुत थोड़ी सी सूचना तिब्बती अनुवादित ग्रन्थों से मिलती है और वह सब प्रामाणिक है इसमें कोई सन्देह नहीं।''[4]

इससे यह स्पष्ट होता है कि सिद्धों के समकाल में भी 'दलित' चेतना को विकसित करने के बहुत प्रसास किया। 'सरह' के जीवन पर जब हम प्रकाष डालते हैं तो सरहपाद का जीवन से मिले प्रमाण उनका शूद्र होने के प्रमाण सिद्ध करते हैं –

> "सरहपाद का साधु जीवन एक महान क्रान्ति थी। उन्होंने श्रम करके जीविका कमाने वाले समाज से नयी साधुओं की परम्परा का सूत्रपात किया। सरहपा के शूद्र होने का सबसे बड़ा प्रमाण है। ब्राह्मण कुछ भी हो जाए वह श्रम नहीं करेगा। वह श्रम से भागता है। इसलिए सरहपा ब्राह्मण नहीं हो सकते हैं। वह हार बनाने वाली षिल्पकार जाति के ही व्यक्ति थे।"[5]

'सरह' ब्राह्मण नहीं थे, इसका एक प्रमाण यह है कि सिद्धों की सूची में उनका पहला नम्बर नहीं है, जबकि वह आदिम सिद्ध माने जाते हैं व सूची बनाने का काम ब्राह्मणों ने किया, जिन्हें सरह से खास चिढ़ है इसलिए उन्होंने सूची में सरह का नाम छठवें नम्बर पर रखा है। सरह से तीसरी पीढ़ी 'लीलापा' और 'सरह' के षिष्य 'शबरपा' तक नम्बर क्रमषः दूसरा व पाँचवां है। यदि सरह ब्रह्मण होते तो अवष्य ही प्रथम स्थान पर होते।[6] (2)

मध्यकालीन हिन्दी साहित्य दो रूपों में मिलता है एक भक्तिकालीन साहित्य दूसरा रीतिकालीन साहित्य। भक्तिकालीन सन्त काव्य आज भी दलित कही जाने वाली शूद्र अछूत, अन्त्यज आदि जातियों के कवियों द्वारा व्यापक स्तर पर रचा गया है कबीर इस धारा के सर्वश्रेष्ठ कवि कहे जा सकते हैं– कबीर, रैदास, पीपा और धन्ना आदि सन्तों ने अपनी वाणियों से जाति–पाति, छुआ–छूत का विरोध किया और मनुष्य मात्र, प्राणिमात्र के प्रति प्रेम और समता की बात

की तुर्क आकम्रण के समय वर्ण व्यवस्था अपनी चरम सीमा तक पहुँच गयी थी। इसी सन्दर्भ में अलबरूनी लिखता है– ''अब केवल ब्राह्मण को ही मोक्ष प्राप्त करने का अधिकार था। जाति व्यवस्था ने भाईचारे और एकता की भावना को समाप्त कर दिया।[7]
इसी सन्दर्भ में कबीर ने कहा–

कहै कबीर विचारि करि, झूठा लोही चाम।
जो या देही रहित है, सो है रमिता राम।। [8]

अर्थात् जो हमारा शरीर है उस के अन्दर आत्मा में ही परमात्मा का निवास रहता है। हम बेकार में भगवान की खोज में भटकते रहते हैं। हिन्दी साहित्य में दलित काव्यधारा में दलित सन्तों का निर्गुण ईष्वर की अवधारणा से मुक्त हो या अनके हो, शरीरधारी हो, या शरीर रहित हो, वह इस किसी भी अवस्था में गुण रहित नहीं है, इसलिए दलित सन्तों का निर्गुण तौहीद से भी परे है।[9] दलित सन्त अपनी राह चलते हैं, उन्होनें वह झगड़ा ही खत्म कर दिया, जो ईष्वर की राह से पैदा हाते हैं। इस सन्दर्भ में कबीर कहते हैं –

हमरा झगरा रहा न कोऊ, पंडित मुल्ला छाड़ै दोऊ
पंडित मुल्ला जो लिख दीया,छड़ि चले हम कुछ न लीया
।।[10]

सन्तों ने भदे भाव बढ़ाने वाले ठेकेदारों को फटकारा और समानता एवं एकता पर विषेष जोर दिया इस सन्दर्भ में कबीर कहते हैं –

एक बूँद एकै मलतूतर, एक चाम एक गूढा ।
एक जाती थे सब उत्पन्ना कौन ब्राह्मण कौन सूदा।।[11]

कबीर जाति के अभिमान में दम्भी लोगों से कहते हैं कि जाति से कोई हीन या महान् नहीं होता है, उसका निर्धारण तो ज्ञान से होता है –

जाति न पछो साधू की, पूछ लीजिए ज्ञान।
माले करो तरवार का पड़ा रहन दो म्यान।।[12]

हिन्दी काव्य में हम रीतिकाल की बात करते हैं तो रीतिकालीन कवियों ने
अधिकतर श्रृँगारपरक रचनाएँ लिखी हैं लकिन हमें रीतिकाल में भी सन्त साहित्य मिलता है– जो निम्न जातियों शूद्रों द्वारा रचा गया। पलटू साहब (जन्म 1793 ई0) को द्वितीय कबीर कहा जाता है जो कबीर सी निडरता व फक्कड़ता के कारण अयोध्यावासियों के लोकप्रिय के पात्र हो गये थे जाति वाद पर तीखी टिप्पणियों के कारण ही उन्हें पण्डे– पुजारियों ने जिन्दा जला दिया। इस घटना ने हिन्दी कविता साहित्य में कालिख पोत दी। पलटू साहब कहते हैं–

सब जातिन में उत्तम तुम ही करतब करो कसाई।
बकरों भेडा मछरी खाओ कहो गाय बराई ।
रूधिर मासँ सब एकै पांडे भू तोरी बम्हनाई।
पढि पढ़ि तुम क्या कीन्ही पंडित अपना रूप न चीन्हा।
बिना भजन भगवान के ब्राह्मण ढढे समान ।
हरि को भजै सो बड़ा है जाति न पूछों कोय।।[13]

आधुनिक हिन्दी कविता में 1850 से 1950 तक 150 वर्षो के साहित्य में प्रेमचन्द और महादेवी वर्मा आदि एक दो अपवादों को छोड़ कर सारे लेखक एक ही जाति या वर्ण विषेष के क्यो है? क्या कारण है कि सब द्विज हैं उनमें अपवाद स्वरूप भी कोई दलित लेखक नहीं है राजेन्द्र यादव का यह प्रष्न अत्यन्त महत्वपूर्ण है। हिन्दी साहित्य के इतिहास लिखने वालों को दलित लेखन की जानकारी न रही होगी ऐसा नही हैं क्योंकि हीरा डोम और अछूतानन्द की जानकारी प्रायः उन्हें थी।[14]
आधुनिक काल के द्विवेदी युग में 1914 ई0 मे 'सरस्वती' पत्रिका में हीरा डोम की 'अछूत की षिकायत' कविता छपी जिसमें विचारोत्तेजक दलित विमर्ष है जो इस प्रकार है–

हमनी के राति दिन दुखवा भागे त बानी,
हमनी के सहजे से मिनती सुनाइबि
हमनी क` दुख भगवनओ न देखता जे
हमनी के कबले कलेसवा उठाइबि।
पदरी साहब के कचहरी में जाइबिजा,
बेधरम हाके रगंरजे बनि जाइबि।
हाय राम धर्म न छाडे त बनत बाजे
बेधराम होके कैसे मुहवा देखाइबि ।[15]

इसी समय हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल में दूसरें महत्वपर्ण रचनाकार अछूतानन्द हरिहर की कविताएँ मिलती हैं आपकी एक कविता 1912 में छपी, अपनी कविताओं के माध्यम से स्वामी अछूतानन्द जी ने जातिवाद, छूआछूत, कर्मकाण्डों का विरोध किया–

मै अछूत हूँ, छूत न मुझमें फिर क्यों जग ठुकराता है
छूने में भी पाप मानता, छाया से धबराता है ।
मुझे देखकर नाक सिकोड़ता दूर हटा वह जाता है।
हरिजन भी कहता है मुझकों हरि से विलग करता है।। [16]

ईष्वर का भय दिखाकर हिन्दुओं को चेतावनी देते हैं अछूतानन्द–

समझ साचे कर चेत अरे, अभिमानी कर ईष्वर का ध्यान।
मिट जायेगा तू दूनियास से अरे समझता नर का स्वान।।
कभी न तेरा भला हायेगा । जो मुझकों ठुकरायेगा।
दुर्गति के गहरे खन्दक में तू इक दिन गिर जायेगा।।[17]

अछूतानन्द की दलित चेतना कविताओं से प्रभावित होकर स्वामी ष्शंकराचार्य, केवलानन्द अयोध्यानाथ, दण्डी आदि कवि रचना कर्म में प्रवृत्त हुए। केवलानन्द ने तो वर्ण व्यवस्था के निर्माता मनु को कटघरे में खड़ा किया।

मनु जी तमु ने वर्ण बना दिये चार।
जो दिन तमु ने वर्ण बनाए, न्यारेऊ रगं क्यों ना।।
गोरे ब्राह्मण, लाल क्षत्रिय, बनियाँ पीले बनाये क्यों ना ।
शूद्र बनातें काले वर्ण के पीछे को पैर लगवाए क्यों ना।।
कैसे हो पहिचान पापे जी दो अक्षर डालवये क्यों ना।
लोहे के वर्तन पर पानी कचंन को देयो डार।।[18]

उक्त दलित–चेतना की धारा से हिन्दू कवियों एवं लेखकों ने भी दलितोद्धार पर कविताएँ लिखनी प्रारम्भ कर दी। वरन इसमें यदा–कदा दलित पक्ष में लिखने की कोषिष की गयी। इस धारा में ऐसा कोई भी लेखक या कवि नहीं हुआ जिसने अपना सम्पर्ण रचना कर्म दलित संवदेना को व्यक्त करने में समर्पित कर दिया है। लेकिन कुछ हिन्दी कवियों के मन में दलितों के प्रति उदार भावनायें

जाग्रत हुई और उन्होंने दलितों की पीड़ा को समझा तथा उस पर अपनी लेखनी चलाई। उदाहरणार्थ आर० सी० प्रसाद सिंह की लम्बी कविता ''हरिजन'' की ये पक्तियाँ देखिए–

रे कौन तुम्हें कहता है अछूत?
तुम तो प्रभु की सच्ची विभूति हो
यह पतित प्रताड़ित दीन जाति
मांग ती तुम्ही से आज भीख
तमु क्षमाषील कर क्षमा इसे
दे दो नव युग की स्वर्ण सीख।। [19]

राष्ट्रकवि सोहन लाल द्विवेदी मन्दिर प्रवेष के लिए हरिजन से यौ प्रार्थना कराते हैं–

खोलो मन्दिर द्वार पुजारी,
मत ठुकराओं चरण धूलि लूं बार–बार जाऊं बलिहारी।
क्यों तुमने शबरी निषाद की अपने मन से बात बिसारी
मैं भी एक उन्हीं के कुल का प्रभु पद पजून का अधिकारी।[20]

हिन्दी दलित विमर्ष लगभग इसी चितन पर खड़ा है वह समाज की मूल चेतना पर बिल्कुल प्रहार नही करता है 'सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला' जिन्हें आज दलित चेतना के प्रमुख कवियों में गिना जाता है उन्होनें अपनी कविताओं के माध्यम से दलितों पर होने वाले अत्याचार एवं उनकी गुमसुम पीड़ा को समझा और अपनी कविताओं के माध्यम से उस पीड़ा को उजागर किया। और दलित वर्ग पर दया भाव दिखाया–

दलित जन पर करो करूणा
दीनता पर उतर आये,
प्रभु तुम्हारी शक्ति अरूणा।
हरे तन– मन प्रीति पावन,
मधरु हो मुख मनोभावन।
सहज चितवन पर तरंगित, हो
तुम्हारी किरण तरूणा।[21] (2)

हिन्दी साहित्य में प्रगतिवादी यह प्रगतिषील साहित्य का उदय सन् 1930 के दषक में हुआ। उसका विधिवत नामकरण 1936 में हुआ, जब वामपंथी लेखको ने प्रगतिषील लेखक संघ की स्थापना की। लेकिन प्रेमचन्द ने इसकी स्थापना से पहले ही दलितों पर कहानियाँ लिखनी प्रारम्भ कर दी थी[22]
प्रेमचन्द के साहित्य से प्रभावित होकर प्रगतिवादी एवं प्रयोगवादी नयी कविता और साठोत्तरी कविता के कुछ कवियों ने भी दलित चेतना को अपनी कविताओं का प्रमुख विषय बनाकर दलितीय पीड़ा को मानवीय धरातल पर लाने का प्रयास किया। किन्तु प्रेमचन्द के बाद के प्रगतिषील साहित्य में हमें दलित–विमर्ष की तेजस्विता मिलती है, बाबा नागार्जुन की प्रसिद्ध 'हरिजन गाथा' दलितों के सामूहिक हत्याकाण्ड के विरूद्ध एक विद्रोही प्रतिक्रिया है। कविता में आष्चर्य है –

ऐसा तो कभी नही हुआ था कि
एक नहीं दो नहीं तीन नहीं तेरह के तेरह
अभागे अंकिचन मनुपुत्र
ज़िन्दगी झोंके दिये गये हो प्रचंड अग्नि की विकराल
लपटों में,
साधन सम्पन्न ऊँची जातियों वाले सौ–सौ मनुपुत्रों द्वारा
किरोसिन के कनस्तर मोटे–मोटे लक्कड़, उपले के ढेर,
और एक विराट चिताकुण्ड के लिए खोदा गया
आ गयी हो होली वाले 'सुपर मौज' के मूड में [23]

प्रयोगवादी काव्य धारा के प्रमुख कवि मुक्तिबोध ने भी ऐसे व्यक्तियों पर भारी कुट व्यंग्य किये हैं, जो दलित मनुष्यों का खून चूसकर ऐसे करते हैं। और अपनी कतिवाओं से दलित–चेतना की जागृति फैलाते हुए मुक्तिबोध ने दलितों पर अत्याचार करने वाले शोषक मनुष्यों पर कटु व्यंग्य भी प्रस्तुत किये हैं–

सामाजिक महत्व की,
गिलौरियाँ खाते हुए।
असत्य की कुर्सी पर,
आराम से बेठै हुए।[24]

मुक्तिबोध दलित शोषित वर्ग से यह भी कहते हैं –

तुम्हारे पास हमारे पास,
सिर्फ़ एक चीज़ है,
ईमान का झण्डा है,
बुद्धि का बल्लभ है,
ह्रदय की तबारी तसला है।
नए–नए बनाने के लिए भवन,
आत्मा के मनुष्य हैं। [25]

नयी कविता के प्रमुख कवि डॉ० जगदीष गुप्त ने भी दलित–चेतना को सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक एवं मानवीय धरातल पर खुलकर प्रस्तुत किया है। दलितों के उद्धार स्वरूप नयी कविता के कवियों ने स्वतन्त्र रूप से मुक्त काव्य संग्रहों या कविताओं के साथ ही प्रबन्ध ग्रन्थों की रचना करके दलित–चेतना को चरमोत्कर्ष पद्रान किया। डॉ० जगदीष गुप्त द्वारा कृत 'षम्बुक' खण्ड काव्य इसका सटीक निर्देषन है।–

षूद्र हूँ मैं,
मानव समाज में ।
मेरा अस्तित्व बहुत अल्प है
फिर भी जाने क्यों मेरे मन में
युगों–युगों से परिभाषित
व्यक्ति के चरित्र को मानव भविष्य को
नये सन्दर्भों में
जानने समझने का
उपजा एकलव्य है।[26]

हिन्दी साहित्य में दलित चेतना के सम्बन्ध में 'षम्बकू' कृति नयी कविता की एक क्रान्तिकारी रचना है। इसमें नायक 'षम्बकू' को दलित तपस्वी के रूप में प्रस्तुत किया है।
साठोत्तरी कविता के हिन्दी साहित्य में खास तौर से कविता में व्यवस्था के विरूद्ध तीव्र विद्रोह मिलता है। राजनैतिक अव्यवस्थाएं, सामाजिक भेदभाव, आर्थिक विषमताएं सांस्कृतिक पतन और इन सबके बीच मानव का शोषण इसी दषक के साहित्य के केन्द्र में है। धूमिल की कविता 'मोचीराम' इस दषक की दलित–चेतना की सषक्त प्रमुख कविता है। धूमिल के लिए हर आदमी एक जोड़ी का

जूता है। जाहिर है कि उसका सारा सघंर्ष दो वक़्त की रोटी के लिए है, पर उसकी संवेदना यह है कि वह जूतों में भी आदमी की 'नवैयत' देखता है–

राँपी से उठी हुई आँखों ने मुझे
क्षण भर टटाले ा
न कोई बड़ा है।
मेरे लिए हर आदमी एक जोड़ी जूता है।
जो मेरे सामने
मरम्मत के लिए खड़ा है।[27]
और फिर
जैसे पतियाये हुए स्वर में
वह हँसते हुए बोला
बाबू जी! सच कहूँ– मेरी निगाह में
न कोई छोटा है।[28]

इसके अतिरिक्त साठ के दषक में जिन कवियों ने दलित–चेतना पर कार्य किया उनमें चन्द्रिका प्रसाद जिज्ञासु, ललई सिंह यादव, डा० अगेन लाल, रजनीकान्त शास्त्री, मंगलदेव विषारद, रामस्वरूप वर्मा, खेम चन्द्र सौगत, लालचन्द्र राही, बदल राम रसिक आदि कवियों एवं लखकों की पुस्तकों एवं कृतियों में दलित–चेतना की झलक स्पष्ट दिखाई पड़ती है।

आठवें व नवें दषक में जिन सवर्ण कवियों ने दलित–चेतना में कविताएं लिखी उनमें प्रमुख डॉ० वार्षेण्या, श्री हरीष चन्द जोषी, श्री सतीष चन्द अग्रवाल आदि कवियों ने दलितों पर करूणा व अश्रुपात कर उन्हें उनके अधिकार दिलाने हेतु कविता में सक्रिय है।

इसी सन्दर्भ में डॉ० वार्षेण्या ने अपनी कविता के माध्यम से दलित–चेतना को जाग्रत करने की कोषिष की–

सम्पन्नता
करती है अलग–अलग
भखूों को भखू से
तरह–तरह की कोषिष
वर्ण, जातियों, वर्ग
नाना भेद उभर आते
दिन निकलते– निकलते
प्रकाष से सूरज के
प्रकाष से काली चादर ही अच्छी है
कह उठती
पीढियॉं बड़बड़ाकर[29]

उपर्युक्त कथनों एवं कविताओं से यह स्पष्ट होता है कि हिन्दी काव्य में दलित कविता की जड़े अस्सी के दषक से ही नही उभरी है बल्कि ये जड़े हिन्दी साहित्य के आदिकाल से ही उभर गयी थी, परन्तु विडम्बना यह रही कि कुछ पुरातन मनुवादी विचारधारी व्यक्तियों ने इन्हें उभरने नहीं दिया। इसी परिणामतः इन जड़ों से उगा पौधे को विकसित होने में आज समय लग रहा है। हिन्दी में दलित–विमर्ष ने एक विषाल लेखक वर्ग तैयार किया है, जिनका रचना कर्म दलित सवालों को न केवल प्रखर रूप में उठा रहा है, बल्कि उसके पक्ष में दलित साहित्य का माहौल भी विकसित कर रहा है। इसमें प्रमुख हैं– भगवानदास, मोहनदास, नैमिषराय, ओमप्रकाष वाल्मीकि, धर्मवीर, डॉ० सुखवीर, जयप्रकाष कर्दम, एन. सिंह, तेज सिंह, सूरजपाल चौहान, रजनी तिलक, अषोक भारती, सी०वी० भारती, मलखान सिंह और सुषीला टाकभौर आदि महत्त्वपूर्ण हस्ताक्षर हैं।

संदर्भ

1. सोहनपाल सुमुनाक्षर, सात समुन्द्र पार दलित साहित्य की हुंकार – पृ –67
2. सोहनपाल सुमुनाक्षर , सात समुन्द्र पार दलित साहित्य की हुंकार,– पृ –68
3. सोहनपाल सुमुनाक्षर , सात समुन्द्र पार दलित साहित्य की हुंकार–पृ–68
4. राहुल सांकृत्यायन, दोहाकोष–पृ–28
5. कंवल भारती, दलित धर्म की अवधारणा और बौद्ध धर्म पृ–51
6. कंवल भारती, दलित धर्म की अवधारणा और बौद्ध धर्म पृ – 51
7. रामधारी सिंह दिनकर, संस्कृति के चार अध्याय – पृ – 205
8. श्यामसुंदर दास, कबीर ग्रन्थावली – पृ – 73
9. कवलं भारती, दलित धर्म की अवधारणा और बौद्ध धर्म– पृ – 69
10. श्यामसुंदर दास, कबीर ग्रंथावली – पृ – 74
11. पारस नाथ तिवारी, कबीर ग्रंथावली पद – पृ – 161
12. पारस नाथ तिवारी, कबीर ग्रंथावली पद – पृ – 162
13. रामपाल गंगवार, नीलम सिहं, दलित विमर्ष पृ – 107
14. रामपाल गंगवार, नीलम सिहं, दलित विमर्ष पृ – 138
15. रामपाल गंगवार, नीलम सिंह , दलित विमर्ष पृ – 138
16. माताप्रसाद, हिन्दी काव्य में दलित काव्यधारा– पृ – 49
17. माताप्रसाद, हिन्दी काव्य में दलित काव्यधारा– पृ– 50
18. माताप्रसाद, हिन्दी काव्य में दलित काव्यधारा– पृ – 51
19. कंवल भारती, दलित विमर्ष की भूमिका – पृ – 114
20. कंवल भारती, दलित विमर्ष की भूमिका – पृ – 115
21. विवके निराला, निराला साहित्य में दलित चेतना – पृ –148
22. रजत रानी मीनू नवे दषक की हिन्दी दलित कविता– पृ –14
23. रजत रानी मीनू, नवें दषक की हिन्दी दलित कविता– पृ –15
24. गजानन माधव मुक्तिबोध, मुक्तिबोध रचनावली खण्ड–।। पृ – 237
25. कंवल भारती, दलित विमर्ष पृ – 120
26. जगदीष गुप्त, शम्बूक – पृ – 83–84
27. स० केषवदत्त रूबाली– दलित साहित्य सदंर्भ पृ – 50
28. कंवल भारती दलित विमर्ष की भूमिका पृ – 123
29. षिवधारा रावत, स्वातंत्रोतर हिन्दी कविता में दलि